International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor 3.866 Volume 3, Issue 05, May 2016
Website- www.aarf.asia, **Email** : editoraarf@gmail.com

बालक की अंतर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति के संदर्भ में स्वामी विवेकानंद जी के शिक्षादर्शन की प्रासंगिकता का पुनरावलोकन

डॉ० मनीषा चौहान,
असिस्टेंट प्रोफेसर,शिक्षाशास्त्र विभाग
श्री नारायण गर्ल्स पी जी कॉलेज, उन्नाव

सारांश

शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य के व्यक्तित्व का समग्र विकास करना है परन्तु दुर्भाग्यवश वर्तमान शिक्षा का उद्देश्य मात्र डिग्री दिलाने तक ही सीमित रह गया है। ऐसे डिग्रीधारी विभिन्न पदों पर बैठे व्यक्तियों का देश के विकास में योगदान नगण्य रहता है। दूसरे के विचारों को रटकर मस्तिष्क में जबरन ठूंसकर कुछ डिग्रियां प्राप्त करके क्या अपने को शिक्षित समझा जा सकता जो शिक्षा जनसमुदाय को जीवन के संघर्ष के लिए उपयुक्त नहीं बनाती, जो उनके चरित्र का विकास नहीं करती क्या उसे हम शिक्षा का नाम दे सकते हैं? वर्तमान समय में हमको ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो बालक का सर्वांगीण विकास करके उसे मनुष्य की श्रेणी में लाकर खड़ा करे। इसी परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द जी के शिक्षा दर्शन का वर्तमान समय में अवलोकन करने पर उसकी पूर्णता का बोध होता है। उन्होंने अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति को ही शिक्षा कहा है। वे शिक्षा को चरित्र निर्माण की प्रक्रिया मानते थे । स्वामी जी ने भौतिकवाद को अध्यात्मवाद से समन्वित करके भारतवासियों की उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने देश के नवनिर्माण में अपनी शिक्षाओं द्वारा अभूतपूर्व योगदान दिया। स्वामी जी युगद्दष्टा एवं युगसृष्टा दोनों ही रूपों में प्रासंगिक है उन्होंने अपने देश की तत्कालीन स्थिति को समझा और नवभारत के निर्माण की नींव रखी। वर्तमान समय में स्वामी जी की शैक्षिक विचारधारा का आत्मसात करके उन्हीं के बताए मार्ग पर चलना श्रेयस्कर होगा।

मुख्य शब्द- समग्र विकास, चरित्र निर्माण, अन्तर्निहित, पूर्णता, अभिव्यक्ति, युगद्दष्टा, युगसृष्टा , नवभारत, निर्माण

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

सभी प्रकार की शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य निर्माण है। समस्त प्रशिक्षणों का उद्देश्य मनुष्य का विकास करना ही है जिस प्रक्रिया से मनुष्य की इच्छाशक्ति का प्रवाह और प्रकाश संयमित होकर फलदायी बन सके, वही शिक्षा है । परन्तु क्या आत्मसात किए बिना मस्तिष्क में जबरन ढूंसे गए ज्ञान को प्राप्त कर लेने से कोई शिक्षित हो सकता है? वर्तमान शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को डिग्री प्राप्त कराकर उच्च पदों पर बैठाना रह गया है। ऐसे डिग्रीधारी उच्च पदस्थ व्यक्तियों का देश के विकास में योगदान नगण्य रहता है। हमको आज ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो चरित्र-निर्माण, मनुष्य-निर्माण एवं जीवन- निर्माण में सहायक हो,एक ऐसी शिक्षा जिससे मनुष्य स्वावलम्बी बन सके। इसी परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द जी के शिक्षा दर्शन का वर्तमान में पुनरावलोकन किया गया है। उन्होंने अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति को ही शिक्षा कहा है। विश्व का असीम ज्ञान भण्डार स्वयं व्यक्ति के मन में है वाह्य संसार तो एक प्रेरक मात्र है जो व्यक्ति को अपने मन का अध्ययन करने के लिए प्रेरित करता है। विवेकानन्द जी के अनुसार समस्त ज्ञान चाहे वह लौकिक हो या पारलौकिक, मनुष्य के मन में है। प्रायः यह ज्ञान प्रकाशित न होकर ढका रहता है ज्यों ज्यों आवरण हटता रहता है त्यों त्यों हमारे ज्ञान की वृद्धि होती जाती है। जब यह आवरण पूर्ण रूप से हट जाता है तो व्यक्ति सर्वज्ञ और सर्वदर्शी हो जाता है। स्वामी विवेकानन्द जी के शिक्षा दर्शन में व्यक्ति के समग्र विकास पर बल दिया गया है। विवेकानन्द जी के शिक्षा दर्शन पर दृष्टिपात करने से वर्तमान समय में उसकी अत्यधिक प्रांसगिकता जान पड़ती है।

विवेकानन्द जी वेदान्ती थे वे वेदों और उपनिषदों द्वारा निर्देशित ज्ञान पर पूर्ण आस्था रखते थे। उनका विश्वास था कि, धर्म केवल पूजापाठ से संभव नहीं होता वरन् मनुष्यत्व एवं सत्यनिष्ठता से ही सम्भव होता है। विवेकानन्द जी के अनुसार वे सभी स्थान जहां निष्काम कर्म द्वारा मानव की सेवा की जा सकती है, पूजा के स्थान हैं। उनके अनुसार सभी प्राणियों में एक ही आत्या का निवास होता है और मनुष्य में ही ईश्वर का रूप देखा जा सकता है। वे सभी के प्रति प्रेम, सहानुभूति और सेवा का उपदेश देते थे। उन्होंने "उठो, जागो और लक्ष्य तक पहुंचने तक रुको मत" का उपदेश दिया और लोगों को अपनी सामर्थ्य के अनुसार संसार में सकारात्मक बदलाव हेतु प्रेरित किया।

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन में भी उनके जीवन दर्शन की झलक देखने को मिलती है। उन्होने मनुष्य में परम सत्ता के गुणों की खोज करते हुए शिक्षा को 'अन्तर्निहित ज्ञान की पूर्णता की अभिव्यक्ति' बताया है। सम्पूर्ण शिक्षा तथा समस्त अध्ययन का एकमेव उद्देश्य है, व्यक्तित्व को गढ़ना। परन्तु हम यह न करके केवल

बहिरंग पर ही साज सज्जा का प्रयत्न करते रहते हैं। जहां व्यक्तित्व ही अधूरा है वहां वाह्य अंग की साज सज्जा का क्या लाभ? समस्त शिक्षा का ध्येय है अंतर्मानव को विकसित करना । अंतर्मानव वह व्यक्तित्व जो अपना प्रभाव सब पर डालता है, शक्ति का अपार केन्द्र है। जब यह अंतर्मानव तैयार हो जाता है तो वह जो चाहे कर सकता है। यह व्यक्तित्व जिस वस्तु पर अपना प्रभाव डालता है, उसी को क्रियाशील कर देता है। स्वामी जी का विश्वास है कि बालक स्वयं अपना विकास करने में सक्षम है। विकास की समस्त संभावनाएं उसी के अन्दर विद्यमान हैं। शिक्षक का कार्य केवल माली की भांति उचित खाद पानी देना है तथा शीत, धूप और वर्षा से उसकी रक्षा करना है। शिक्षक को बालक के विकास में सहायक होना चाहिए उसे प्रेमपूर्वक उचित अनुचित का ज्ञान देना चाहिए। विवेकानन्द जी का कथन है कि "कोई भी व्यक्ति दूसरे को शिक्षा नहीं दे सकता क्योंकि समय और अवसर आने पर मनुष्य बड़े से बड़े सत्य को स्वयं जान लेता है और अंत में स्वयं को शिक्षित करता है।" स्वामी जी के अनुसार, मनुष्य की मूल प्रवृत्ति आध्यात्मिक है इसलिए शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य का आध्यात्मिक विकास होना चाहिए। स्वामीजी ने तत्कालीन शिक्षा की आलोचना करते हुए उसे तथ्यात्मक ज्ञान प्रदान करने का साधन मात्र माना। उनके अनुसार अत्यधिक सूचनाएं इकट्ठी हो जाने से मस्तिष्क में एक प्रकार की अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है। यदि व्यक्ति केवल सद्विचारों को आत्मसात कर लें तो वह अधिक शिक्षित होगा। विवेकानन्द जी का कथन है कि यदि कोई व्यक्ति अच्छे विचार के साथ कार्य करे तो उसके संस्कारों का प्रभाव भी अच्छा ही होगा तथा संस्कार उसे सत्कार्य करने के लिए बाध्य करेंगे। जब व्यक्ति इतने सत्कार्य एवं चिन्तन कर लेता है तो उसमें सत्- कार्य करने की एक अनिवार्य प्रकृति उत्पन्न हो जाती है। ऐसे में वह गलत कार्य करना भी चाहे तो उसका मन उसे वैसा करने से तत्काल रोक देगा, ऐसा ही व्यक्ति चरित्रवान या प्रतिष्ठित कहलाएगा। व्यक्ति के चरित्र की जांच बड़े या असाधारण कार्यों से नहीं बल्कि अत्यन्त साधारण कार्यों से की जानी चाहिए, इसी से वास्तविक चरित्र का पता लगता है। स्वामी जी के अनुसार जिस व्यक्ति का चरित्र सदैव एवं समस्त परिस्थितियों में महान रहता है वास्तव में वही शिक्षित एवं बड़ा है। चरित्र पुन: पुन: अभ्यास की समष्टि मात्र है। सतत् अच्छे कार्य करते रहने, पवित्र विचार मन में लाने तथा नीचे संस्कारों को दबाने का पुन: पुन: अभ्यास ही चरित्र का पुनर्गठन कर सकता है। स्वामी जी के अनुसार जो शिक्षा पद्धति व्यक्ति में आत्मविश्वास की भावना का विकास नहीं करती, मौलिक विचारों के लिए प्रेरित नहीं करती, उसके चरित्र का निर्माण नहीं करती उसे सिंह के समान शक्तिशाली नही बनाती और उसमें विश्वबन्धुत्व का भाव जागृत नहीं करती वह शिक्षा सार्थक नहीं होगी बल्कि शिक्षा ही नहीं कहलाएगी।

स्वामी विवेकानन्द ने पाठ्यक्रम में केवल आध्यात्मिक विषयों को सम्मिलित नहीं किया बल्कि उन्होंने शिक्षा के पाठ्यक्रम में उन सभी विषयों को सम्मिलित करने की बात कही जिससे शरीर रक्षा और शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। उन्होंने स्वीकार किया कि मानव शरीर ही मोक्ष प्राप्त करने का दुर्लभ साधन है। स्वामी जी ने व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाने के लिए अर्थोपार्जन को आवश्यक माना और इसके लिए वैज्ञानिक तथा प्राविधिक शिक्षा को दिए जाने की संस्तुति की। संसार के विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में रहने के लिए स्वामी की जी ने पाश्चात्य भाषा एवं ज्ञान विज्ञान की शिक्षा को भी पाठ्य- क्रम में शामिल करने पर जोर दिया। स्वामी विवेकानन्द ने आध्यात्मिक विषयों को पाठ्यक्रम में रखने की वकालत की क्योंकि आध्यात्मिक विकास के बिना मानव की पूर्णता की अभिव्यक्ति संभव नहीं है। अतः आध्यात्मिक पाठ्यक्रम द्वारा व्यक्ति में पूर्णता की चेतना जागृत करना आवश्यक है।

स्वामी विवेकानन्द योग दर्शन की एकाग्रता पद्धति को शिक्षा की सर्वोत्तम शिक्षण विधि मानते थे। उनके अनुसार चित्त की एकाग्रता ही शिक्षा का प्रमुख तत्व है और एकाग्रता की प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करना अत्यंत आवश्यक है। ब्रह्मचर्य से छात्र में स्मरण शक्ति का विकास होता है तथा स्वयं के प्रति श्रद्धा, एवं विश्वास जागृत होता है, जो व्यक्ति के जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है।

स्वामीजी ने गुरुकुलीय शिक्षा को महत्वपूर्ण माना। उन्होंने कहा कि बालक को बाल्यावस्था से ही ऐसे व्यक्ति (गुरु) के साथ रहना चाहिए जिनका चरित्र जाज्वल्यमान अग्नि के समान हो जिससे उच्चतम शिक्षा का जीवंत उदाहरण शिष्य के समक्ष प्रस्तुत हो। हमारे देश में ज्ञान का दान सदैव त्यागी पुरुषों द्वारा ही होता रहा है अतः स्वामी जी का मानना था कि ज्ञान- दान का भार त्यागियों के कन्धों पर ही डाला जाए। शिक्षकगण विद्यार्थियों को अपने घर में रखते थे अपने शिव्यों को वे अन्न और वस्त्र भी देते थे। शिक्षकों के निर्वाह के लिए धनी लोग दान देते रहते थे और उसी से वे अपने शिष्यों का पालन पोषण करते थे। स्वामी जी के अनुसार शिष्य और गुरु दोनों के लिए कुछ आवश्यक नियम हैं। शिष्य के लिए शुद्धता, ज्ञान की पिपासा, लगन, परिश्रम, संयम, विचार, वाणी एवं कर्म की पवित्रता, अनुशासन एवं ब्रह्मचर्य आवश्यक है। शिष्य के हृदय में उच्च आदर्शों की प्राप्ति के लिए सच्ची व्याकुलता हो जिससे कि वह अध्यवसाय में लग जाए तो उसकी सफलता निश्चित है। शिष्य का एक मात्र ध्येय उच्चतम सत्य के ज्ञान की प्राप्ति होना चाहिए इसके लिए शिष्य आत्मा में स्थित होकर आत्मा की उपासना करे। शिष्य को मुक्त होने की तीव्र आकांक्षा होनी चाहिए। सांसारिक क्लेशों से निकलने के लिए इन्द्रियों एवं वासनाओं का परित्याग करना होगा। स्वामी जी के अनुसार शिष्य को गुरु के प्रति श्रद्धा, विश्वास,

विनय, नम्रता रखनी चाहिए तभी उसमें धर्मभाव उत्पन्न होगा परन्तु गुरु की आज्ञा को आंख मूंदकर पालन न करे बल्कि स्वयं भी स्वतंत्र रूप से विचार करे ।

गुरु के विषय में स्वामी विवेकानन्द जी का कथन है कि उन्हें शास्त्रों का मर्मज्ञ होना चाहिए। गुरु के लिए निष्पापता आवश्यक है। गुरु को पूर्णरुपेण शुद्धचित्त होना चाहिए तभी उसके शब्दों का मूल्य होगा। स्वामी जी के अनुसार गुरु का कार्य ही है कि वह शिष्य में आध्यात्मिक शक्ति का संचार कर दे न कि शिष्य की बुद्धिवृत्ति अथवा अन्य किसी शक्ति को उत्तेजित मात्र करे। शिक्षक के लिए आवश्यक है कि वह शिष्य के प्रति सहानुभूति रखे तथा उसे सदैव प्रोत्साहित करे। स्वामी जी का कहना है कि गुरु को धन, नाम या यश की प्राप्ति हेतु शिक्षा नहीं प्रदान करनी चाहिए। उनके कार्य सम्पूर्ण मानव जाति के प्रति विशुद्ध प्रेम से ही प्रेरित हों। आध्यात्मिक शक्ति के संचार के लिए केवल शुद्ध प्रेम ही आवश्यक है। किसी भी प्रकार का लोभ, स्वार्थपूर्ण भाव तत्काल ही इस प्रेमरूपी माध्यम को नष्ट कर देगा। विवेकानन्द जी ने सच्चा गुरु उसे कहा है जो क्षणभर में अपने आपको मानो हजारों व्यक्तियों में परिवर्तित कर सके तथा अपने को तुरंत शिष्य के स्तर तक नीचे ला सके और अपनी आत्मा को शिष्य की आत्मा में प्रविष्ट करा कर है, शिष्य के मन द्वारा देख व समझ सके। ऐसा गुरु ही यथार्थ एवं वास्तविक शिक्षा दे सकता है।

स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार धर्म ही शिक्षा की आत्मा है, यहां धर्म की शिक्षा से तात्पर्य किसी सम्प्रदाय का मत या विचार की शिक्षा से नही है। धार्मिक शिक्षा से तात्पर्य यथार्थ सनातन तत्वों को व्यक्तियों के समक्ष रखना है। सर्वप्रथम तो जो लोग इन सनातन तत्वों को प्रत्यक्ष कर गए हैं, उन महापुरुषों की पूजा करनी होगी और जनता के समक्ष आदर्श या इष्ट के रूप में श्री रामचन्द्र जी, श्रीकृष्ण, श्री हनुमान, आदि को रखना होगा ! धार्मिक शिक्षा के लिए स्वामी जी ने हृदय की शिक्षा को महत्वपूर्ण माना। ईश्वर का सन्देश हमें हृदय से ही प्राप्त होता है। आधुनिक शिक्षा का दोष यही है कि यह बुद्धि विकसित करती है परन्तु हृदय पक्ष की अवहेलना करती है, इसी कारण से मनुष्य स्वार्थी हो जाता है। धार्मिकता के लिए सत्य का आचरण अत्यन्त आवश्यक है स्वामी जी ने कहा कि "जो कुछ तुम्हें शरीर से, बुद्धि से या आत्मा से कमजोर बनाए, उसे विष की भांति त्याग दो; उसमें जीवन शक्ति नहीं है, वह-कभी सत्य नही हो सकता । सत्य तो बलप्रद है, पवित्रतास्वरूप है, ज्ञान स्वरूप है। सत्य तो वह है, जो शक्ति दे, जो हृदय के अन्धकार को दूर कर दे, जो हृदय में स्फूर्ति भर है।" उन्होंने सत्य को सहज एवं बोध- गम्य बताया उन्होंने उपनिषदों के सत्य अपनाने और कार्यरूप में परिणत करने का उपदेश किया। स्वामी जी ने सभी मतों के, भिन्न भिन्न सम्प्रदाय के दुर्बल, दुखी और पददलित लोगों

को स्वयं अपने पैरों पर खड़े होकर मुक्त होने के लिए कहा है। उपनिषदों का भी मूलमन्त्र है – दैहिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्वाधीनता । स्वामी जी ने सभी धर्मो को सनातन का ही भिन्न- भिन्न रूप माना। उनमें सभी धर्मों के प्रति सहिष्णुता थी, सब पर उनका प्रेम था। उन्होंने संपूर्ण जीवन मतवाद एवं सांप्रदायिकता की संकुचित सीमा को समाप्त करने में बिताया।

स्वामी विवेकानन्द जी ने स्त्रियों को सम्मान देने की बात कही है। उनका मानना था कि सभी उन्नत राष्ट्रों ने स्त्रियों को सम्मान देकर ही महानता प्राप्त की है। स्त्रियों की अनेक समस्याओं का हल शिक्षा में निहित है। पुत्रों की भांति पुजियों का भी लालन- पालन और शिक्षा सावधानीपूर्वक की जानी चाहिए। स्त्रियों को अपनी समस्याओं का हल स्वयं करने योग्य बनाना चाहिए। चरिज गठन, ब्रह्मचर्य के पालन हेतु विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। भारतवर्ष की स्त्रियों को सीता के पदचिन्हों का अनुसरण करके नारीत्व विकसित करके अपनी उन्नति करनी चाहिए। वर्तमान समय में नारियों को तथाकथित आधुनिकता के रंग में रंगने के जो कुप्रयास हो रहे हैं उन सभी को सीता-चरित्र के आदर्श से असफल करने का प्रयास करने की आवश्यकता है। वर्तमान समय की आवश्यकता को देखते हुए, जन्मभूमि को समुन्नत बनाने के लिए अपनी कुछ सन्तानों को ब्रह्मचारी व ब्रह्मचारिणी बनाने की भी आवश्यकता है। यदि एक भी स्त्री ब्रह्मज्ञानी हो गयी तो उसका व्यक्तित्व सैकड़ों स्त्रियों को स्फूर्ति प्रदान करके सत्य के प्रति जागृत करेगा। यह देश के लिए बड़ा योगदान होगा। सुशिक्षित और सच्चरित्रवान ब्रह्मचारिणियों को शिक्षा का भार वहन करना चाहिए। इतिहास, वेद, पुराण, कला कौशल, गृह व्यवस्था, गृहस्थ जीवन के कर्तव्य और चरित्र निर्माण के सिद्धांतों की शिक्षा के साथ-साथ सीना- पिरोना, गृहकार्य और शिशुपालन आदि विषयों की शिक्षा दी जाए। जप, ध्यान आदि शिक्षा के अनिवार्य अंग होंगे। स्वामीजी ने स्त्रियों को आत्मरक्षा के उपाय सिखाने पर भी बल दिया। भारतवर्ष की उन्नति हेतु अहल्याबाई, रानी लक्ष्मीबाई, जीजाबाई, मीराबाई के आदर्शों को चरितार्थ करने वाली तथा अपनी पवित्रता निर्भयता द्वारा प्राप्त शक्ति के कारण वीरमाता बनने योग्य स्त्रियों को सामने लाया जाए। यदि स्त्रियां उन्नत हो जाएंगी तो उनकी आने वाली संताने भी देश का नाम अपने उदार कार्यों के द्वारा उज्ज्वल करेंगी और देश में शक्ति, ज्ञान एवं संस्कृति का जागरण होगा।

जन शिक्षा के विषय में स्वामी जी का मत था कि यदि हम पुन: उन्नत होना चाहते हैं, तो हमें जनमानस में शिक्षा का प्रचार- प्रसार करना होगा। प्रत्येक स्त्री और पुरुष को अपनी मुक्ति का कार्य स्वयं करना होगा उनके

समक्ष केवल विचार रखने की आवश्यकता है। उन्होंने सभी नागरिकों को संस्कृत का विद्वान बनाने पर बल दिया, क्योंकि संस्कृत शब्दों की ध्वनिमात्र से ही हमारी जाति की प्रतिष्ठा बल और शक्ति प्राप्त होती है। स्वामी जी ने समाज के सभी वर्गों को जगाने का बात कहीं और उनके लिए जीवन के आवश्यक विषयों तथा वाणिज्य व्यापार एवं कृषि आदि की शिक्षा प्रदान करने की बात की। स्वामी जी चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति इस विषय में जागरूक हो कि उसके चारों ओर क्या चल रहा है? यदि वह विद्यालय आने में असमर्थ है तो शिक्षकों, नवयुवकों एवं सन्यासियों को शिक्षा प्रदान करने उसके घर जाना चाहिए। स्वामी जी ने उस प्रत्येक मनुष्य को देशद्रोही कहा है जो जनता के व्यय से शिक्षित हुआ है और अब उनकी ओर किंचितमात्र भी ध्यान नहीं देता। इसीलिए स्वामी जी ने समर्थ भाई बन्धुओं को वंचित जनसमूह में शिक्षा का प्रसार करने के कार्य में लग जाने को कहा और उन्हें सहानुभूतिपूर्वक यह बताने को कहा कि 'तुम हमारे भाई हो, हमारे ही शरीर के अंग हो।' इससे उनका उत्साह कई गुना बढ़ जाएगा।

स्वामी जी कट्टर वेदान्ती थे उन्होंने वेदो और उपनिषदों द्वारा निर्देशित ज्ञान पर पूरी आस्था रखते हुए वेदान्त दर्शन को व्यवहारिक स्वरुप प्रदान किया। उन्होंने व्यक्ति की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा माना। बालक स्वयं अपने आप को शिक्षित करता है । समस्त ज्ञान व्यक्ति के अन्दर निहित है उसे जागृति और प्रबोधन की आवश्यकता होती है और इस कार्य में शिक्षक उसकी सहायता करता है। स्वामी जी ने बालकों के लिए कहा है कि वे अपनी ज्ञानेन्द्रियों के उचित उपयोग के लिए अपनी बुद्धि का उचित प्रयोग करना सीखें। स्वामी जी ने भौतिक वार को अध्यात्मवाद से समन्वित करके पराधीन भारतवासियों को उन्नति तथा स्वतंत्रता का मार्ग दिखाया। वे शिक्षा को चरित्र निर्माण की प्रक्रिया मानते थे उन्होंने शिक्षा को सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दोनों रूपों में स्वीकार किया। स्वामी जी के जीवन दर्शन एवं शिक्षा दर्शन के आधार पर उन्हें युगद्दष्टा एवं युगसृष्टा कहा जा सकता है। उन्होंने अपने देश की तत्कालीन स्थिति को देखा समझा और नव भारत के निर्माण की नींव रखी। स्वामी विवेकानन्द ने युवाओं को अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए दृढ़ संकल्प रखने के लिए प्रेरित करने हेतु मूल मंत्र दिया- "उठो जागो और तब तक मत रुको जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए।" स्वामी जी ने देश के नवनिर्माण में अपनी शिक्षाओं द्वारा अभूतपूर्व योगदान दिया। वर्तमान परिप्रेश्य में स्वामी जी के शिक्षादर्शन की अत्यधिक आवश्यकता प्रतीत होती है। देश को उन्नति एवं विकास के पथ पर अग्रसित करने के लिए हमें स्वामी विवेकानन्द जी के बताए मार्ग पर आगे बढ़ना होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- तिवारी द्वारकानाथ, शिक्षा, स्वामी ब्रहारथानन्द, रामकृष्ण मठ रामकृष्ण आश्रम मार्ग धन्तोली, नागपुर

2- शुक्ला रमा एवं सिंह मधुरिमा- शिक्षा के दार्शनिक आधार, आलोक प्रकाशन,एफ.एफ प्लाजा, 177/46, कल्लन कालाठ गुईन रोड, अमीनाबाद, लखनऊ

3- स्वामी विवेकानन्द – कर्मयोग, रामकृष्णमठ नागपुर

4- स्वामी विवेकानन्द – राज योग, रामकृष्णमह

5- प्रसाद, वैद्यनाथ · विश्व के महान शिक्षाशास्त्री, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना

6- पाण्डेय स्नेह एवं सिंह शैल शिक्षा के दार्शनिक आधार, चन्द्रलोक प्रकाशन, कानपुर

7. गौर अखिला, शिक्षादर्शन, आलोक प्रकाशन, एफ.एफ प्लाजा, अमीनाबाद लखनऊ